'ब्रह्म सत्यं जगत् स्फूर्तिः, जीवनं सत्यशोधनम्'

विनोबा-प्रवचन

(सप्ताह में तीन बार–मंगल, गुरु और शनि को प्रकाशित)

वर्ष ३, अंक १२२ | वाराणसी, शनिवार, २४ अक्टूबर, १९५९ | पचीस रुपया वार्षिक

सर्व-सेवा-संघ की बैठक में

पठानकोट (पंजाब) २३-९-'५९

लोकशाही की बुनियाद

गांधीजी ने शांति की स्थापना के लिए खुद अपने और जिन्ना के दस्तखत से एक पत्रक निकाला, जिसमें कहा गया था कि दंगे नहीं होने चाहिए, हम दंगों का निषेध करते हैं। परन्तु उस पत्रक का कोई खास प्रयोजन नहीं निकला। यद्यपि गांधीजी ने विश्वास रखने की कोशिश करने का वह प्रयोग करके देखा। मुझे यह कहने में दुःख होता है कि जैसे जिन्ना के शब्द पर हिन्दुओं का विश्वास नहीं था, वैसे उस वक्त बहुत से मुसलमान गांधीजी के शब्द का विश्वास खो चुके थे। इसलिए उसमें से कुछ निकलनेवाला था ही नहीं, फिर भी उन्होंने एक प्रयोग करके देखा। आमने-सामने बैठकर एक नीति तय करने के लिए जो जरूरी है, वह आज नहीं है। हम वह विश्वास खो बैठे हैं।

'वेदान्तो विज्ञानं विश्वासश्चेति शक्तयः तिस्रः। यासां स्थैर्ये नित्यं शान्ति-समृद्धी भविष्यतो जगति।' वेदान्त, विज्ञान और विश्वास—ये तीन शक्तियाँ हैं। मैं कहना यह चाहता हूँ कि यह बहुत जरूरी है कि हिन्दुस्तान में आपकी एक ऐसी जमात हो, जिसके शब्दों पर लोग विश्वास रखें। हम और कुछ कर पायें या न कर पायें, यह दूसरी बात है, लेकिन कम-से-कम लोग हमारे शब्दों पर विश्वास ही रखते हैं, इतना हम कर सकें तो अहिंसा के लिए, सर्वोदय के लिए और मसले हल करने के लिए कुछ-न-कुछ राह निकल सकेगी।

अहिंसक संगठन कैसा होना चाहिए ?

प्यारेलालजी ने अपनी पुस्तक 'लास्ट फेज' में गांधीजी का एक वाक्य उद्धृत किया है–"आर्गनायजेशन इज द टेस्ट आफ नान-वायलेंस', संगठन अहिंसा की कसौटी है। मैंने कई दफा संगठन के विरुद्ध अपनी आवाज उठायी है। इस वाक्य के आधार से कुछ लोगों को लगा कि संगठन का महत्त्व गांधीजी ने इसमें बताया है। शब्दों का एक चमत्कार होता है। इस वाक्य में गांधीजी यह सूचित करना चाहते हैं कि अहिंसा वैसा संगठन कभी नहीं कर सकती है, जैसा हिंसा कर सकती है। संगठन के जो बाह्य तरीके हिंसा को उपलब्ध हैं, वे अहिंसा को उपलब्ध नहीं हैं। तिसपर भी अहिंसा में ऐसी योजना होनी चाहिए कि किसी विचार का निश्चय हो तो लोग उसे अवश्य मानें। अहिंसक योजना में किसी प्रकार का 'डिसिप्लिनरी' ऐक्शन नहीं लेना पड़ता है, शासन नहीं चलाना पड़ता है, दंडशक्ति की जरूरत नहीं रहती है। जो भी कहना है, विचार के तौर पर कहा जाता है। विचार के तौर पर वह सुना जाता है और विचार के तौर पर ही उसपर अमल भी किया जाता है। जैसे हिंसा के संगठनों से अमल किया जाता है, उससे बहुत अच्छा अमल अहिंसक संगठन में किया जाता है। मैंने गुजरात में बहुत दफा कहा था कि "मरजियात याने फरजियात से फरजियात।" हमारी हर कोई सलाह लोगों की मर्जी पर निर्भर है। हमारे सेवक,साधक और साथी उसे मानें, या न मानें, यह उनकी मर्जी पर है। लेकिन फिर भी वह ज्यादा-से-ज्यादा लाजमी बन जाती है। जो ऐच्छिक बात है, वह आवश्यक से ज्यादा आवश्यक होनी चाहिए। मुझसे पूछा गया था कि क्या आप चाहते हैं कि स्कूल और कालेजों में संस्कृत लाजमी की जाय? मैंने कहा कि मैं नहीं मानता कि संस्कृत का दर्जा इतना नीचे किया जाय कि उसे लाजमी करना पड़े। बल्कि उसे ऐच्छिक ही रखा जाय और उसकी इच्छा हरएक को हो। पानी पीना ऐच्छिक रखा गया तो क्या लोग उसे पियें, इसके लिए वह लाजमी करना जरूरी रहेगा? हरएक को प्यास लगेगी, इसलिए हर कोई पानी पीयेगा। लाजमी से ऐच्छिक रखने पर बेहतर नतीजा निकलेगा। अहिंसक संगठन में यह हमें साबित करना होगा। हम स्वतन्त्र हैं, लेकिन निस्तन्त्र नहीं हैं, विच्छृंखल नहीं हैं, अव्यवस्थित नहीं हैं। हम सलाह-मशविरा करते हैं, सलाह देते हैं और सलाह लेते हैं, लेकिन हमारा सलाह-मशविरा करने का ऐसा ढंग हो कि जिससे काम आवश्यक ही हो जाय। याने जिस डिसिप्लिन की तालीम मिलिट्री ट्रेनिंग के जरिये लोगों को दी जाती है, वह डिसिप्लिन ऐच्छिक तौर पर हममें आनी चाहिए। हमारा मन ही नीचे के स्तर पर है, यूँ सोचकर हम उसके ऊपर उठकर सोचेंगे तो फिर मेरे मन में आया, इसलिए मैं करूँगा, ऐसा कोई नहीं कहेगा। उस हालत में बात तो ऐच्छिक रहेगी, लेकिन उसपर अमल जरूर किया जायगा। जिस किसीने संगठन का मेरा विरोध इस अर्थ में लिया होगा कि हमें मिल-जुलकर काम करने की कोई जरूरत नहीं है, अपने काम की रिपोर्ट पेश करने की जरूरत नहीं है, पैसा किसीने खर्च किया तो हिसाब रखने की और कोई माँगे तो पेश करने की जरूरत नहीं है—ऐसा कोई मानता हो

www.vinoba.in

तो हम अहिंसा में नाकाम साबित होंगे। हिंसा में जो डिसिप्लिन दीख सकती है, उससे ज्यादा डिसिप्लिन हम दिखा सकें और फिर भी हर चीज स्वतंत्र वृत्ति से कर रहे हैं, ऐसा सबको अनुभव हो, यही अहिंसा की कसौटी है।

इसलिए हम लोग विच्छृंखल न रहें, बल्कि आपस में बार-बार सलाह-मशविरा करते रहें। "बोधयन्तं परस्परम्।" हम एक-दूसरे को बोध दें। परस्पर-बोधन में बहुत बड़ी शक्ति है। एक मनुष्य आज्ञा देता है और दूसरा उसे उठाता है, इसमें जो शक्ति है, उससे बड़ी शक्ति इस बात में है कि आप मुझे बोध देते हैं और मैं आपको बोध देता हूँ। इससे अनेकों के हृदय में जो बोध-शक्ति भरी हुई है, उस सबका संग्रह होगा और उससे बोध-शक्ति बढ़ेगी। इसलिए हम सब बार-बार सलाह-मशविरा करते चले जायँ और सब मिलकर जो विचार तय हो, उसे मानें। जहाँ सिद्धान्त के बारे में विरोध हो, वहाँ तो हमने तय ही किया है कि एक मनुष्य किसी प्रस्ताव को खंडित कर सकेगा। एक को भी 'विटो' (Veto) का हक है, यह तो हमने 'सेफ्टी ह्वाल्व' रखा है, उतनी सुरक्षा रखी है। इस हालत में सब मिलकर एक बात तय करते हैं तो उसे मानना होगा। उसके अमल में कोई डर या खतरा नहीं रहेगा। और बहुमति से फैसला करने की माँग होती हो तो जो हुआ, यह ठीक है या नहीं, यह सवाल पैदा हो सकता है। लेकिन जहाँ सब मिलकर बात तय की जाती है और एक व्यक्ति को भी उसे रोकने का हक रहता है, वहाँ हक ने ज्यादा सुरक्षितता रखी है। तिसपर भी यह मुमकिन है कि सबके सब मिलकर एक मति से कोई गलत काम करें। लेकिन फिर हम इसपर अमल करने लगेंगे तो थोड़े ही दिनों में राज खुलेगा और गलती ध्यान में आयेगी। जहाँ एक मनुष्य के भी ध्यान में गलती आयी तो वह उसे रोक लेगा। इसलिए बाह्य योजना द्वारा जितनी सुरक्षा हो सकती थी, हमने की है। सर्वसम्मति से फैसला लेने की जो बात है, वह बाह्य योजना है और उसके साथ-साथ आन्तरिक योजना यह है कि हम सब मन के ऊपर उठकर सोचने की आदत डालें। ये दो बातें हम करते हैं तो हमारे इस समाज में अधिक-से-अधिक संगठन दीख पड़ेगा।

संकट मोचन !

आज मैं जिस तरह एक चुनाव का—सर्व-सेवा-संघ के अध्यक्ष के चुनाव का—साक्षी रहा, वैसा अभी तक मेरी जिन्दगी में किसी भी चुनाव का साक्षी नहीं रहा। यह मेरा पहला ही प्रयोग है, जब कि चुनाव हो रहा है और मैं उसे देख रहा हूँ। इसके पहले मैंने न किसी चुनाव में हिस्सा लिया, न मैं किसी चुनाव का साक्षी रहा। मुझे डर तो था ही कि मैं उसे कैसे देखूँगा। यद्यपि सब लोगों ने मिलकर तय किया तो अच्छा ही किया, लेकिन फिर भी मेरी जो नाजुक आत्मा है, वह उसे कैसे सहन करेगी, इसका मुझे डर था। इसलिए मैंने संकट-मोचन हनुमान का आश्रय लिया था। काशी में संकट मोचन हनुमान हैं, उनके दर्शन के लिए मैं गया था। बड़ा एकान्त और सुन्दर स्थान है। तुलसीदासजी की उस हनुमान पर बड़ी भक्ति थी। वे उसकी उपासना करते थे और पुराने जमाने में तुलसीदासजी के ग्रन्थों में रामायण उतनी पढ़ी नहीं जाती थी, जितना हनुमान चालीसा। तुलसीदासजी को किसी बीमारी ने ग्रस लिया, जिसमें उनको बड़ी परेशानी हुई थी। तब उन्होंने हनुमान की प्रार्थना की थी, जो हनुमान चालीसा के रूप में है। इन दिनों शिक्षितों में वह चीज कम चलती है, उनकी रामायण अधिक चलती है। यद्यपि अशिक्षितों में भी वह चीज चलती है। इन दिनों जब लोग मुझसे मिलने आते हैं तो कभी-कभी ऐसे प्रसंग हो जाते हैं, जिनको बरदाश्त करने की शक्ति मुझमें है या नहीं, इसका मुझे डर रहता है। तब मैं चरखा लेकर बैठता हूँ, जिसे मैंने संकट-मोचन हनुमान नाम दिया है। फिर सामने कोई ऐसी चीज हो, जिसे बरदाश्त करने की शक्ति मुझ में न हो तो भी उस हनुमान की कृपा से मैं बरदाश्त कर सकता हूँ। अभी आपने जिस तरह काम किया, उसमें मैं किसी प्रकार से हिस्सा लेने का नहीं सोचता था। इसलिए नहीं कि मैं इस तरीके को गलत मानता था। मैं उसे अच्छा ही मानता हूँ, लेकिन यह उत्तम तरीका है, सर्वोत्तम तरीका नहीं। हर दफा मनुष्य को सर्वोत्तम ही चीज खाने को नहीं मिलती है, उत्तम मिले तो भी बस है। आपने उत्तम चीज की है।

निष्ठावालों पर निष्ठा रखें

आज सभा में हर जिले के लोक-सेवकों का आँकड़ा सुनाया गया। हर जिले में औसत १५-२० लोकसेवक हैं। एक जिले—दरभंगा (बिहार)—में तो ७०० हैं। उस जिले की आबादी ३५ लाख है। याने पाँच हजार लोगों के लिए एक लोकसेवक के हिसाब से उस जिले ने मेरी माँग पूरी की है। हमेशा यह सवाल उठता है कि जहाँ इतनी तादाद में धड़ाधड़ लोकसेवक बनते हैं तो कुछ गड़बड़ मामला होगा। लेकिन मेरा मन यह मानने को राजी नहीं है। क्योंकि आखिर हमें हमेशा समझ ही लेना चाहिए कि हममें से हरएक मनुष्य एक बीच की हालत में है। याने उसके मन में कुछ करने की इच्छा है और उसके जीवन में कुछ कमजोरी है। इधर जीवन की कमजोरी और उधर चित्त के विचार, इन दोनों के संगमस्थान पर, छेदन-बिन्दु पर, हममें से बहुत से लोग हैं। तो जैसे भक्तिमार्ग में लोगों ने माना है कि नाम-स्मरण करने से मुक्ति मिलती है, चाहे आप भक्ति से नाम-स्मरण कर रहे हों या भक्ति से न कर रहे हों तो भी ऐसा नाम लेते हों कि उससे आपका मंगल ही मंगल होगा। "वे मेरे दोस्त हैं, प्राणसखा हैं, जो आलस से, दंभ से या भक्ति से नामस्मरण करते हैं," ऐसा तुकाराम ने कहा है। भक्ति से नाम-स्मरण करने की बात तो हम समझ सकते हैं, लेकिन तुकाराम ने तो आलस से और दंभ से भी नाम-स्मरण किया जाय तो उसको कबूल किया है। याने उनकी श्रद्धा की हद हो गयी। एक मनुष्य दंभ से नाम-स्मरण कर रहा है, उसे भी अपना प्राणसखा मानने के लिए तुकाराम राजी हैं। इसको यूँ समझना चाहिए कि कोई एक ऐसा विचार है, जो लोगों को खींच रहा है। यह श्रद्धा हममें होनी चाहिए कि इसमें जो आते हैं, वे बावजूद इसके कि जानते नहीं, इसकी तरफ खींचे जा रहे हैं, इस विचार में जो मिठास है, उस तरफ खींचे जा रहे हैं। किसीके जीवन की कसौटी हम नहीं कर सकते हैं, श्रद्धा ही रख सकते हैं। षड्विध निष्ठा पर श्रद्धा रखकर जिन्होंने काम करने का तय किया है, वह निष्ठा ही उन्हें छूएगी, उनपर हावी होगी और वह निष्ठा मनुष्य को अपना वाहन बनायेगी। हमने जान-बूझकर निष्ठाएँ कठिन रखी हैं और समझाने में हम कसर करें तो भी उचित नहीं होगा। इसलिए हम ठीक से समझायें, लेकिन उसका ऐसा कठिन अर्थ न करें कि लोग उससे डरें। हरि-नाम से लोग डरेंगे तो दुनिया में बेखौफ होने का कौनसा साधन रहेगा ? इसलिए निष्ठाएँ कठिन हैं, फिर भी जिन्होंने उन निष्ठाओं पर निष्ठा रखी है, उनके हृदय के दरवाजे खुल गये और वह निष्ठा काम कर रही है, ऐसा मानना चाहिए।

www.vinoba.in

दूसरी बात—हर जिले में जो लोकसेवक हैं, उन्होंने अपनी तरफ से एक प्रतिनिधि सर्व-सेवा-संघ में भेजा है। मना कर एक शख्स को राजी किया और उसे प्रतिनिधि बनाया तो वह प्रतिनिधि मातृस्थान में आया, माता की हैसियत में आया, यह समझना चाहिए। जिन भाइयों ने उसे अपना प्रतिनिधि बनाकर भेजा, उनके लिए उसके मन में वात्सल्यभाव होना चाहिए। उन सबके साथ उसका ऐसा संपर्क होना चाहिए कि जैसे माँ के सामने बच्चों का दिल खुल जाता है, वैसे उसके सामने उन सब साथियों का दिल खुले। मैंने माँ की उपमा दी तो साथी का अर्थ छोड़ने के लिए नहीं। मैं मानता हूँ कि हम सब साथियों ने ही प्रतिनिधि चुना है, लेकिन वह सबकी तरफ वात्सल्यभाव से देखेगा, उनके अनन्त दोषों को परिमार्जित करने की कोशिश करेगा, उन्हें मंगल रूप देता रहेगा। माँ बच्चे के लिए यह जो सारा विश्वास रखती है, उस विश्वास से बच्चे की उन्नति होती है, वैसे ही प्रतिनिधि मातृस्थान बनकर काम करे तो बहुत लाभ होगा।

मैं परिचय चाहता हूँ

तीसरी बात—मैं चाहता हूँ कि आपमें से हरएक के साथ मेरा व्यक्तिगत परिचय, शख्सी तौर पर परिचय रहे। उसके लिए मैंने अपना मन तैयार कर रखा है। मन तैयार करने में मुझे बहुत मेहनत नहीं उठानी पड़ी। लेकिन मन तैयार करना पड़ा, इसलिए कि अक्सर मेरा मन एक अलग वातावरण में रहने का आदी हो गया है। एक चिन्तन का स्तर है, जिसमें रहने का वह आदी हुआ है। लेकिन इस वक्त मैंने उसे तैयार किया है और मैं चाहता हूँ कि आप सबके साथ मेरा व्यक्तिगत परिचय रहे और एक मित्र के नाते आपके जीवन के और विचार के साथ मैं अपने को बाँध लूँ। यह एक मुक्ति मार्ग हम सबके लिए है। हम एक-दूसरे के स्नेह से परिवर्धित, सुसंस्कृत होंगे और मुक्ति मार्ग में अग्रसर होंगे। मैं चाहूँगा कि जिस किसीको जो भी विचार मेरे सामने रखने की इच्छा हो, खुले दिल से रख सकता है। इसके पहले भी लोग रख सकते थे, मेरा दिल खुला था। मेरे दिल में ऐसी कोई चीज छिपी नहीं है, जो मैं किसीके सामने खोल नहीं सकता हूँ। ऐसी कोई चीज मैंने अपने मन में शेष नहीं पायी है, इसलिए सामनेवाला भी हर कोई अपनी बात मेरे सामने रख ही सकता था। लेकिन लोग नहीं रखते थे, यूँ सोचकर कि इसे क्यों तकलीफ दें? पर अब इसके लिए मुझे एक काम करना पड़ा है। उसकी कुछ लोगों को खुशी होगी तो कुछ लोगों को नाखुशी भी होगी। आज तक मेरा जो अध्ययन चल रहा था, वह मैंने समाप्त किया है। इस अध्ययन के परिणामस्वरूप कुछ-न-कुछ लाभ हो सकते थे, वे अब नहीं होंगे, यों सोचकर कुछ लोग नाराज होंगे। परन्तु मेरे मन में वह डर नहीं है। सहज भाव से मैं कुछ पढ़ूँगा, देखूँगा, लेकिन पहले मेरा जो अध्ययन चलता था, उससे मैं मुक्त हुआ हूँ। इसलिए आप लोगों के साथ सम्पर्क रखने में मुझे कोई तकलीफ नहीं होगी।

शरीरश्रम करें

आखिरी बात—बीच में लोक-सेवक की प्रतिज्ञाओं की और सर्वोदय-पात्र की बात चलती थी तो एक विचार बार-बार पेश किया जाता था कि लोक-सेवक सर्वोदय-पात्र पर या ऐसी ही बाहरी मदद पर आधार रखेंगे तो भिक्षु जैसे रहेंगे। मैंने इस आक्षेप का उत्तर दिया था कि यह लाजमी है कि लोक-सेवक शरीर-परिश्रम करें, चाहे कुछ उत्पादक, कुछ अनुत्पादक, लेकिन परिश्रम जरूर करें। यह जरूरी नहीं है कि वह अपने ही खेत पर काम करें। वह दूसरे के खेत पर करें। नहीं तो अपना खेत उसे बाँध लेगा। दूसरे के खेतों पर काम, बीमार की सेवा, सफाई वगैरह परिश्रम का काम तो लोक-सेवक करेगा ही। इसलिए फिर हमने निष्ठाओं में सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह के साथ शरीर-परिश्रम को भी जोड़ दिया। उसपर मैं बहुत सोचता था कि मुझे भी शरीर-परिश्रम करना चाहिए। पहले मैंने बिहार में रोज आधा-एक घंटा खोदने का काम कुछ दिन चलाया, लेकिन शरीर उसे नहीं सह सका। इसलिए मैंने छोड़ दिया। वैसे शरीर-परिश्रम मुझे बहुत प्यारा है और पिछले तीस सालों में मेरे रोज के कम-से-कम चार घंटे शरीर-परिश्रम में बीते हैं। लेकिन इन दिनों शरीर कुछ थका है, इसलिए रोज का थोड़ा घूमना और कातना मैंने अपने लिए बस मान लिया। लेकिन जब लोक-सेवक की निष्ठाओं में शरीर-परिश्रम की निष्ठा जोड़ी गयी तो मेरे मन में विचार आया कि मुझे भी कुछ-न-कुछ शरीर-परिश्रम करना चाहिए। फिर कश्मीर में इसका मौका मिला। हम जब पीर-पंजाल पर जा रहे थे तो वहाँ वाहन नहीं जा सकता था, इसलिए सामान के लिए कुछ मनुष्यों को साथ लेना पड़ा। हमें तो उतना ऊँचा पहाड़ चढ़ने की आदत नहीं थी, इसलिए हम वैसे ही चढ़े, हमारा सारा समान दूसरों के कन्धों पर था। फिर मन में विचार आया कि हम अपना सामान क्यों न उठायें? इस तरह पीर-पंजाल की कृपा से सामान उठाने का विचार मन में आया। जबसे हमने सामान उठाना शुरू किया है, तबसे हमें बहुत ही आनन्द हुआ। इस तरह शरीर-परिश्रम की निष्ठा बढ़ाने के लिए मैंने अपने जीवन में उतना फर्क कर लिया है। ◆◆◆

[गतांक से समाप्त]

प्रार्थना-प्रवचन

सरमोली (जम्मू) १-९-'५९

"सह नाववतु सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै"

आप सब लोग दूर-दूर के पहाड़ों से आये और इस बारिश में बैठे हैं। आपके दिल का प्रेम इसीपर से साफ दीखता है। आखिर यह प्रेम क्यों है? इस रास्ते से बड़े-बड़े लोग और राजा-महाराजा गये, लेकिन गरीबों की खिदमद के लिए, गरीबों के काम के लिए कोई नहीं गया। गरीबों की खिदमत का काम करनेवाला लोकप्रिय बनता है। बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं को डर से या बिना डरे भी इज्जत तो देते हैं, लेकिन प्यार नहीं देते। यह प्यार तो उसे मिलता है, जो गरीबों के लिए घूमता है। आठ साल से हमें इस बात का तजुरबा हो रहा है।

आज की तरह बारिश में हजारों मीटिंग हुई हैं। लोग बारिश में भी खामोशी से बैठते हैं, जैसे आज आप बैठे हैं और हमारी बातें सुनते हैं, कई दफा बहनें छोटे-छोटे बच्चों को गोद में लेकर

www.vinoba.in

बैठती हैं और हमारी बातें सुनती हैं। बिहार, उड़ीसा, तमिल-नाड, आंध्र, केरल, मैसूर, बंबई, गुजरात, राजस्थान, पंजाब और अब यहाँ भी हम यही देख रहे हैं। लोगों के दिल में यह पहचान होती है कि गरीबों का भला चाहनेवाला कौन है ?

मिलकर रहो

यहाँपर जमीन की किल्लत है और जमीन की हद बाँध दी गयी है, फिर भी लोग प्यार से दान देते हैं। इस दान की हमें बहुत कद्र है। यह ठीक है कि जमीन का रकबा जो दान दिया जा रहा है,वह बहुत बहुत कम है, लेकिन जिस प्यार से दान दिया जा रहा है, वह प्यार कम नहीं है।

हम यहाँके लोगों से कहना चाहते हैं कि आप जंगल में रहते हो, बाल-बच्चों पर प्यार करते हो, मेहनत करते हो, पसीना बहाकर रोटी खाते हो, सो तो बहुत अच्छा है। लेकिन अब और एक बात आपको सीखनी है। वह भी कोई नयी नहीं है, पुरानी ही है और यह कि आप सब मिल-जुलकर रहो। एक होकर रहो। आपस-आपस में एक-दूसरे की मदद करो। गाँव को कुनबा समझो। जैसे एक कुनबे में माँ, बाप, बच्चे, बूढ़े होते हैं, वैसे ही गाँव के सभी लोग मिलकर एक कुनबा है, इस खयाल से देखो। गाँव में ५०, ६० घर होते हैं। इसलिए ऐसे छोटे-छोटे गाँवों में यह आसानी से हो सकेगा। जमीन गाँव की है, यूँ समझकर रहोगे तो गाँव की तरक्की होगी। जहाँ अलग-अलग मिलकियत है, वहाँ चैन नहीं है, सुख नहीं है।

भक्ति की कसौटी

देहातियों के दिल में परमेश्वर की भक्ति होती है, लेकिन यह भक्ति भजन तक ही महदूद होती है, वह काफी नहीं है। उसे जिन्दगी में लाना होगा और मजबूत बनाना होगा। हम सब परमात्मा, अल्लाह की औलाद हैं। इसलिए भाई-भाई बने रहेंगे और एक-दूसरे को मदद करेंगे तो गाँव की जिन्दगी में लुत्फ आयेगा। हमारी सबकी जिन्दगी इकट्ठा बीतेगी। ग्राम-सभा गाँव की मालिक रहेगी। गाँव की जिम्मेवारी हम सबकी होगी। खायेंगे तो हम सभी खायेंगे और मौका पड़ने पर सभी फाँका भी करेंगे। जो कुछ करेंगे, साथ करेंगे। सुख-दुःख बाँट लेंगे। गाँव की रोजमर्रा जरूरत की चीजें गाँव में ही बनायेंगे। घर-घर में लोगों को दस्तकारी मिलेगी। इस प्रदेश में छह महीने से ज्यादा काम नहीं होता। ऐसे समय में दस्तकारी मिलेगी तो वख्त जाया नहीं जायगा।

यह सब करने के लिए पहला काम तो यह करना होगा कि जमीन की मिलकियत अलग-अलग न रखकर गाँव की बनानी होगी। शादी में एक ही घर का पैसा खर्च न होगा। हर घर से थोड़-थोड़ा खर्च होगा। सभी मिलकर शादी का खर्च करेंगे। इस तरह हम अपनी मुश्तरका जिन्दगी बनायेंगे, तभी अल्लाह का फज्ल पायेंगे। गाँव का कुनबा बनायेंगे तो आप कुछ भी खोयेंगे नही, भर-भरकर पायेंगे, भगवान का प्यार पायेंगे।

भगवान याने कौन ? ये जो सारे बैठे हैं, वे भगवान ही हैं, उसीके मुख्तलिफ रूप हैं। हम सब प्यार से रहें। किसीसे नफरत न करें। गाँव में किसीको भूखा न रखें। गाँव में कोई भूखा रहे तो सभीको तकलीफ होनी चाहिए। थोड़ा-थोड़ा पेट काटकर सभी अपना हिस्सा भूखे को देंगे तो उसे इमदाद मिलेगी, वह सुखी हो जायगा। हम कहना चाहते हैं कि वह सचमुच अल्लाह की इबादत होगी। 'राम कृष्ण रहमानु रहीम' ऐसे नाम लेने से भक्ति नहीं होगी। कुरान में बार-बार कहा है कि "जो अल्लाह पर ईमान रखते हैं और अमल करते हैं..." ईमान और अमल दोनों साथ-साथ रखते है। मुख में राम है तो हाथ में और दिल में भी राम होना चाहिए। यह होगा, तभी सच्ची भक्ति होगी। इसकी कसौटी कहाँ होगी ? हम एक-दूसरे को प्यार करते हैं या नहीं, मदद करते हैं या नहीं, इसी बात में होगी।

आपपर मेरा भरोसा है

यहाँ १०० कनाल जमीन मिली है। वह गरीबों में बाँटी जायगी। उससे गरीबों की जिम्मेवारी भी बढ़ेगी। उन्हें मेहनत-मशक्कत करनी होगी। यहाँके चार-पाँच भाईयों ने दान दिया है, यह काफी नहीं है इस जगह जितने लोगों के पास जमीन है, उन सबको अपनी जमीन का कुछ-न-कुछ हिस्सा देना चाहिए। जिसके पास १०० कनाल जमीन है, वह दो कनाल जमीन देगा तो उतने से काम नहीं चलेगा। हमें उससे ज्यादा मिलना चाहिए। हमें यहाँ १०० मालिक हैं तो १०० दानपत्र मिलने चाहिए और दान पत्र हासिल करने के लिए कारकून भी मिलने चाहिए। आप ही मेरे कारकून हैं।

मेरी कोई संस्था नहीं है और न मेरा कोई इदारा है। मेरा कांग्रेस पर हक नहीं है, नेशनल कान्फ्रेन्स पर हक नहीं है और डेमोक्रेटिक नेशनल कान्फ्रेन्स पर भी हक नहीं है। इन सब पार्टी-वालों पर इन्सान के नाते मेरा हक है, पार्टी के नाते नहीं। ऐसे आप सब जो यहाँ बैठे हैं, उनपर मेरा हक है। मेरे दिल में सभी के लिए प्यार है, लेकिन मेरा किसीपर कानूनी हक नहीं है। इसलिए आपपर मेरा भरोसा है। आप ही मेरे कारकून बनिये और अपनी जमीन का एक हिस्सा भी दीजिये।

यह जो १०० कनाल जमीन मिली है, यह तो काम की शुरुआत है। जब इस गाँव में कोई भी बेजमीन नहीं रहेगा, जमीन की मुश्तरका मिल्कियत होगी, तभी यह काम खत्म होगा। इसलिए जैसे आप 'इलेक्शन' में काम करते हैं, वैसे ही इस काम में लगिये। हर गाँव में मीटिंग कीजिये। लोगों के पास पहुँचिये और सबको इस तहरीक का मक़सद समझाइये। ◆◆◆

अनुक्रम

१. लोकशाही की बुनियाद

पठानकोट २३ सितम्बर '५९ पृष्ठ ७३५

२. "सह नाववतु सह नौ भुनक्तु, सह वीर्यं करवावहै"

सरमोली १ सितम्बर '५९ „ ७३७

श्रीकृष्णदत्त भट्ट, अ० भा० सर्व-सेवा-संघ द्वारा भार्गव भूषण प्रेस, वाराणसी में सम्पादित, मुद्रित और प्रकाशित।
पता: गोलघर, वाराणसी (उ० प्र०) फोन : १३९१ तार : 'सर्व-सेवा' वाराणसी